International Journal of Recent Research and Review, Vol. XV, Issue 4, December 2022
ISSN 2277 – 8322

सनातन धर्म एवं पौराणिक शिक्षा को सुदृढ़ बनाने में देवस्थानों की भूमिका

शोधार्थी – घनश्याम शर्मा
शोध निर्देशक – डॉ. वेद प्रकाश शर्मा
(प्रोफेसर शिक्षा विभाग)
महाराज विनायक ग्लोबल यूनिवर्सिटी जयपुर

सनातन धर्म का आशय है जो सार्वभौमिक सार्वकालिक सार्वदेशिक (सभी स्थानों पर), वैज्ञानिक, तार्किक व सृष्टि नियम के अविरूद्ध है।

सनातन धर्म सृष्टि के आदि से है, आरंभ से हैं। इससे पहले सृष्टि में भी था। यदि इस सृष्टि में इसका समय देखें तो भी जब से दुनिया में मनुष्य ने प्रथम बार आँखें खोली तब से अब तक और जब तक यह संसार रहेगा तब तक सनातन धर्म ही शेष रहेगा। कितने भी जन्म होंगे, कितने भी मत/पंथ/संप्रदाय खड़े होगे फिर भी सनातन वैदिक धर्म हमेशा रहेगा।

सनातन धर्म कोई रिलीजन नहीं है। संप्रदाय भी नहीं है। मत, पंथ या मजहब भी नहीं है। यह सार्वभौमिक सत्य नियम है। विश्व का सबसे पुराना धर्म 'वैदिक धर्म' ही है। इसे ही सनातन धर्म कहते हैं। सनातन धर्म को समझने से पहले धर्म की परिभाषा को समझाना अनिवार्य है।

धर्म शब्द की व्युत्पत्ति

"धर्म=धृ+मन", अर्थात् 'धृ' धातु में 'मन' प्रत्यय लगाने से हुई है। जिसका अर्थ है धारण करना। "धार्यते इति धर्मः" अर्थात् जिसे धारण किया जा सके वह धर्म है।

अपने सद्गुणों को धारण करना ही धर्म है। विश्व में प्रत्येक वस्तु और जीव के अपने–अपने कुछ कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव होते हैं, जो धारणीय हैं। इन सब का मिश्रित रूप ही धर्म कहलाता है।

जैसे सूर्य या अग्नि का गुण है प्रकाश देना, ज्वलनशीलता, ऊपर उठना और ताप देना। यह अग्नि का धर्म है। जल का गुण शीतलता देना, नीचे की ओर प्रवाहित होना और गीला कर देना तथा स्वच्छता प्रदान करने का है। यह जल का अपना धर्म है। ऐसे ही वायु का गुण सुखाना और जीवन प्रदान करना है। वह वायु का धर्म है। आकाश का गुण शून्यता अर्थात् खाली स्थान है, जिसमें वह वायु को धारण करता है। यह गुण ही आकाश का धर्म है। पृथ्वी का गुण है स्थूलता एवं उत्पादन करना। यह पृथ्वी का धर्म है। वृक्षों का गुण है शुद्ध वायु, फल, फूल, औषधि आदि देना। यह वृक्षों का धर्म है। इसी प्रकार मनुष्य के भी कुछ सबके लिए कल्याणकारी विशिष्ट गुण, कर्म, स्वभाव है जो अन्य निर्जीव और चेतन संसार से भिन्न है। अतः दुनिया का हित करने वाले गुण, कर्म और स्वभाव को धारण करना ही मानव का धर्म है।

धर्म की विभिन्न परिभाषाएँ शास्त्रों में निहित हैं, जो सभी को सुख, शांति, आनंद प्रदान करने वाली तथा सर्वांगीण प्रगति का कल्याणकारी मार्ग है। जहाँ धर्म है वहीं स्वास्थ्य है। वहीं सुरक्षा है। वहीं कल्याण है। अतः शास्त्रों में धर्म के बारे में तो कहा गया है कि –

एक एव सुहृद्धर्मो निधने अपि अनुयाति यः
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति।।

अर्थात् इस संसार में एक सच्चा मित्र धर्म ही है, जो निधन या मृत्यु के बाद भी साथ चलता है, बाकी सब तो शरीर के नाश के साथ ही समाप्त हो जाता है।

ईश्वर और ईश्वरीय ज्ञान की इन तर्कपूर्ण परिभाषाओं के समान स्वामी महर्षि दयानंद ने

"स्वमंतव्यामंतव्य" में धर्म की जो परिभाषा की है वह बहुत ही बुद्धि संगत और सर्वग्राह्य है। उनके अनुसार पक्षपात रहित न्याय आचरण, सत्य भाषण आदि वेद विहित आज्ञा का नाम धर्म है। इस कसौटी पर अन्य मनुष्यकृत धर्म, मजहब, रिलीजन, संप्रदाय या उनके विचार तो कह सकते हैं, लेकिन वह धर्म नहीं है जो विचार एक दूसरे के विरोधी हो वह भला धर्म कैसे हो सकते हैं? धर्म के बारे में महाभारत के अनुशासन पर्व में लिखा है –

अहिंसा परमो धर्मस्तथा परं तपः।

अहिंसा परम सत्यं यतो धर्मःप्रवर्तते।।

अहिंसा परम धर्म है, अहिंसा परम तप है और अहिंसा परम सत्य है, क्योंकि उसी से धर्म की प्रवृत्ति होती है। वैशेषिक दर्शन में महर्षि कणाद धर्म की परिभाषा बता रहे हैं –

यतोभ्युदयनिःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः।

अर्थात् जो हमें भौतिक उन्नति, यश व सफलता प्रदान करें तथा मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करें वही धर्म है।

धर्म की परिभाषा करते हुए मनु महाराज लिखते हैं –

धृतिः क्षमा दमो अस्तेयं शैचमिन्द्रियनिग्रहः।

धीर्विद्या सत्यं अक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्।

धृति– धैर्य अर्थात विपत्ति में धैर्य रखना,

क्षमा– यथायोग्य क्षमा धारण करना,

दम– मन पर नियंत्रण अर्थात मन को दुर्विचारों से रोकना,

अस्तेय– चोरी न करना,

शौच–तन, मन, वाणी और कर्मों की पवित्रता,

इंद्रिय निग्रह– इंद्रियों पर नियंत्रण,

धी– सद्बुद्धि,

विद्या– लोक कल्याणकारी ज्ञान की प्राप्ति एवं प्रयोग

सत्य – जो आत्मा में है, मन में है वही वाणी से बोलना,

अक्रोध– क्रोध करना।

धर्म के यह 10 लक्षण हैं। जिसके अंदर यह धर्म के लक्षण जितने–जितने अंश में है, वह उतने–उतने अंश में धार्मिक है। संसार में कोई भी व्यक्ति पूर्णरूप से शत प्रतिशत धार्मिक हो सकता है, लेकिन शतप्रतिशत अधर्मी नहीं हो सकता।

वेदःस्मृतिःसदाचारःस्वस्य च प्रियमात्मनः।

एतच्यतुर्विधं प्राहु साक्षाद्धर्म लक्षणम्।।

वेद, स्मृति, सज्जनों का आचरण और अपने आत्मा के अनुकूल प्रिय आचरण। धर्म के यह 4 लक्षण भी हैं। इन्हीं से धर्म का पता चलता है, निश्चय होता है। यदि कोई धर्म को जानना चाहे तो इन चारों को पहले जान लें, क्योंकि यही धर्म को लक्षित करते हैं।

धर्म का मूल क्या है इसको बताते हुए मनु महाराज लिखते हैं –

वेदो अखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले व तद्विदाम्।

आचारश्चैव साधुनामात्मनस्तुष्टिरेव च।।

अर्थात् चारों वेद और वेदवेत्ताओं द्वारा रचित वेदानुकूल स्मृतियाँ या धर्मशास्त्र तथा उनका श्रेष्ठ स्वभाव सत्पुरुषों का श्रेष्ठ आचरण, अपने आत्मा की प्रसन्नता अर्थात् जिस कार्य के करने में भय, शंका, लज्जा न हो, जहाँ आत्मा को प्रसन्नता अनुभव हो यह धर्म के मूल और आधार है।

इन सब परिभाषाओं से सीधे एक बात सामने आ रही है कि जिस कर्म को धारण करने से संसार में और मृत्यु के बाद भी विशेष सुख की प्राप्ति हो वही धर्म है। इसके विपरीत जिस कर्म को धारण करने से दुःख की प्राप्ति हो वह अधर्म है।

इसके अलावा उपनिषदों में सबसे बड़ा धर्म –

न हि सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकंपरम्।

न हि सत्यात्परं ज्ञान तस्मात्सत्यस्य समाचरेत्।।

अर्थात् सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं और झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं, सत्य से बढ़कर कोई ज्ञान नहीं है। इसलिए सत्य का आचरण सबको करना चाहिए।

जैसे सम्मान और कानून में गरीब,अमीर अथवा हिंदू, मुस्लिम, सिख ईसाई आदि संप्रदायों का भेद नहीं होता, वैसे ही धर्म भी सबके लिए समान होता है। देखो सत्य बोलना, चोरी न करना, विद्या की वृद्धि करना, अपने से बड़ों का आदर करना आदि कर्मों कोभीसंप्रदाय तथा सभी जातियाँ अच्छा मानते हैं। तथा झूठ बोलना, चोरी करना, दूसरों को धोखा देना, दूसरों से द्वेष करना, माता–पिता का अपमान करना आदि को सभी संप्रदाय तथा सभी जातियाँ बुरा बताती हैं। धर्म–अधर्म का वास्तविक लक्षण स्वरुप यही है। इसी के आधार पर मनुष्य सुख–दुःख भोगते हैं। इसी के आधार पर समाज में सम्मान या अपमान होता है। इससे यह बात स्पष्ट हो गई कि धर्म दूसरों को लूटने के लिए नहीं। आडंबर रचाकर आपस में खींचतान करके मानव समाज को विकृत करने की वस्तु नहीं है, किंतु धर्म तो अपने जीवन में धारण करने की चीज है। इससे यह बात भी सिद्ध हो जाती है कि धर्म की रक्षा और अधर्म की निवृत्ति के लिए धर्म को मजहब, संप्रदाय, रेलीजन से अलग रखना चाहिए, क्योंकि धर्म हमारी रक्षा करता है।

सनातन धर्म की धारा वैदिक काल में बही और हिंदू मंदिर या देवस्थान की उत्पत्ति वैदिक इसी काल में हुई थी, जिसमें पूजा स्थलों के शुरुआती संदर्भ ऋग्वेद और अथर्ववेद जैसे ग्रंथों में दिखाई देते हैं। ये शुरुआती मंदिर अक्सर सरल संरचनाएँ होती थीं, जैसे कि उठाए गए प्लेटफार्म या पवित्र ग्रोव, जहाँ देवताओं को प्रसाद दिया जाता था। जैसे–जैसे हिंदू धर्म सदियों से विकसित और विविध हुआ, वैसे–वैसे मंदिरों की वास्तुकला और डिजाइन भी विकसित हुआ।

गुप्तकाल (चौथी से छठी शताब्दी) ने उत्तर भारत में मंदिर वास्तुकला की विशिष्ट नागर शैली का उदय देखा, जिसकी विशेषता इसकी घुमावदार शिखर और विस्तृत अलंकरण है। दक्षिण भारत में द्रविड़ शैली विकसित हुई, जिसमें पिरामिड विमान और जटिल गोपुरम शामिल थे। इन क्षेत्रीय शैलियों ने एक–दूसरे को विकसित और प्रभावित करना जारी रखा, जिसमें मध्ययुगीन काल तक खजुराहो, तंजावुर और मदुरै जैसे शानदार मंदिर परिसरों का निर्माण हुआ।

हिंदू मंदिर का लेआउट और प्रतीकवाद भी समय के साथ विकसित हुआ, गर्भगृह में मुख्य देवता का आवास था, जो मंडप और अन्य सहायक मंदिरों से घिरा हुआ था। मंदिर को ब्रह्माण्ड के एक सूक्ष्म जगत के रूप में देखा गया था, जिसमें प्रत्येक तत्व पवित्र और महत्व से ओतप्रोत था।

देवस्थान लंबे समय से हिंदू धार्मिक जीवन और अभ्यास के केंद्र में रहे हैं मंदिरों में किए गए दैनिक अनुष्ठान और समारोह जैसे पूजा और आरती परमात्मा की उपस्थिति का आह्वान करने और पवित्र वातावरण बनाने के लिए काम करते हैं। इन अनुष्ठानों में मंत्रों का जाप, देवता को फूल, फल और अन्य वस्तुओं की पेशकश और भक्तों को प्रसाद का वितरण शामिल है।

दैनिक पूजा के अलावा मंदिर पूरे वर्ष भव्य त्योहारों और समारोहों की मेजबानी करते हैं जैसे कि दिवाली दशहरा और महा शिवरात्रि। इन समयों के दौरान मंदिर समुदाय का केंद्र बिंदु बन जाता है, जिसमें हजारों भक्त उत्सव में भाग लेने के लिए इकट्ठा होते हैं। इन त्योहारों से जुड़े विस्तृत अनुष्ठान, जुलूस और सांस्कृतिक कार्यक्रम सामाजिक बंधनों को मजबूत करने और साझा धार्मिक मूल्यों को सुदृढ़ करने का काम करते हैं।

मंदिर के पुजारी जिन्हें पुजारी के रूप में जाना जाता है, पूजा की सुविधा और भक्तों का मार्गदर्शन करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे दैनिक अनुष्ठान करने, पवित्र स्थान को बनाए रखने और धार्मिक निर्देश और परामर्श प्रदान करने के लिए जिम्मेदार है। कई मामलों में मंदिर के पुजारी की स्थिति वंशानुगत है, जो समर्पित परिवारों की पीढ़ियों से गुजर रही है।

सनातन धर्म, या शाश्वत धर्म, कालातीत सिद्धांतों और प्रथाओं को संदर्भित करता है जो हिंदू धर्म का मूल बनाते हैं। देवस्थान इन मूल्यों को संरक्षित करने और बढ़ावा देने में सहायक रहे हैं, सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन के सामने परंपरा के गढ़ के रूप में कार्य करते हैं।

प्राचीन शास्त्र के दिशानिर्देशों का पालन करते हुए मंदिरों में अनुष्ठानों और समारोहों के नियमित प्रदर्शन ने सदियों से हिंदू पूजा प्रथाओं की निरंतरता और अखंडता को बनाए रखने में मदद की है। मंत्रों का पाठ, पवित्र कथाओं का अधिनियमन और स्थापित संस्कारों के माध्यम से देवताओं की पूजा ने यह सुनिश्चित किया है कि सनातन धर्म का सार पीढ़ी से पीढ़ी तक पारित किया जाता है।

मंदिरों ने सीखने और छात्रवृत्ति के केंद्र के रूप में भी काम किया है, पांडुलिपियों के विशाल संग्रह और दूर दूर से विद्वानों को आकर्षित करते हैं। वेदों, पुराणों और आगमों जैसे पवित्र ग्रंथों का अध्ययन और प्रसारण, मंदिर पारिस्थितिकी तंत्र का अभिन्न अंग रहा है, जो हिंदू दार्शनिक और धार्मिक ज्ञान को संरक्षित और प्रचारित करने में मदद करता है।

इसके अलावा मंदिरों ने विभिन्न हिंदू सांप्रदायिक परंपराओं जैसे वैष्णववाद, शैव और शक्तिवाद के विकास को पोषित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। प्रत्येक संप्रदाय के पास मंदिरों का अपना नेटवर्क होता है जो अपने चुने हुए देवता को समर्पित होता है, जिसमें अलग–अलग अनुष्ठान, त्योहार और दार्शनिक जोर होते हैं। एकता के भीतर यह विविधता सनातन धर्म की पहचान रही है और मंदिरों ने इन परंपराओं को फलने–फूलने के लिए स्थान और समर्थन प्रदान किया है।

पौराणिक शिक्षा को सुदृढ़ करने में भी देवस्थानों का महत्त्व है।

हिंदू पौराणिक कथाएँ कहानियों, पात्रों और प्रतीकों की एक समृद्ध टेपेस्ट्री है जो गहरी आध्यात्मिक सच्चाइयों और नैतिक पाठों को व्यक्त करती है। देवस्थान इस पौराणिक ज्ञान को संरक्षित करने और जन–जन तक पहुँचाने में सबसे आगे रहे हैं।

मंदिर कला और मूर्तिकला के माध्यम से पौराणिक दृश्यों और आंकड़ों के ज्वलंत चित्रण ने साक्षरता का शिक्षा की परवाह किए बिना इन कहानियों को सामाजिक स्पेक्ट्रम के लोगों के लिए सुलभ बना दिया है। मंदिर की दीवारों और स्तंभों को सुशोभित करने वाले दृश्य आख्यानों ने धार्मिक और नैतिक शिक्षाओं को प्रदान करने के लिए एक शक्तिशाली माध्यम के रूप में काम किया है।

इसके अलावा मंदिरों ने कहानी कहने और प्रवचन की एक जीवंत मौखिक परंपरा का पोषण किया है। रामायण और महाभारत जैसे धार्मिक महाकाव्यों के साथ– साथ विशिष्ट मंदिरों से जुड़ी स्थानीय विद्याओं का पाठ, मंदिर के अनुभव का एक अभिन्न अंग रहा है। प्रशिक्षित कहानीकार जिन्हें कथक के नाम से जाना जाता है, ने इन कहानियों के अपने नाटकीय प्रस्तुतीकरण के दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर दिया है, जिससे पात्रों और उनके कर्मों को जीवंत किया जा सकता है।

पौराणिक विषयों पर आधारित पवित्र नाटकों और नृत्य प्रदर्शनों के अधिनियमन के लए मंदिर भी स्थल रहे हैं। रास लीला, कृष्ण

और गोपियों के बीच प्रेम का चित्रण करती है और राम लीला भगवान राम के जीवन को फिर से दर्शाती है, इस बात के प्रमुख उदाहरण हैं कि कैसे मंदिर परंपराओं ने आकर्षक और अनुभवों के माध्यम से पौराणिक कथाओं को जनता तक पहुँचाया है।

मंदिरों में पौराणिक ज्ञान के मौखिक और प्रदर्शनकारी प्रसारण ने न केवल मनोरंजन किया है, बल्कि अनगिनत पीढ़ियों के मूल्यों, विश्वासों और विश्वदृष्टि को आकार देते हुए शिक्षित भी किया है। इन कहानियों को जीवित और प्रासंगिक रखते हुए, देवस्थानों ने हिंदू समुदाय की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक शिक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अपदुरई, ए. (1981), औपनिवेशिक शासन के तहत पूजा और संघर्ष : एक दक्षिण भारतीय मामला, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. अप्पादुराई, ए. और ब्रेकेनरिज, सीए, 1976, दक्षिण भारतीय मंदिर : प्राधिकरण, सम्मान और पुनर्वितरण। भारतीय समाजशास्त्र में योगदान, 10 (2) पृ. सं. 187–211
3. आर्य, ए., 2019, प्रतिहार काल की मंदिर वास्तुकला और मूर्तिकला, कावेरी बुक्स।
4. आशेर, एम.एण्म., 2000, पूर्वी भारत की कला, 300–800 ई. एशियाई शैक्षिक सेवाएँ।
5. भारद्वाज, एस.एम., 1983, भारत में हिंदू तीर्थ स्थल : सांस्कृतिक भूगोल में एक अध्ययन, कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस।
6. फूलर, सीजे, 2004, कपूर की लौ : भारत में लोकप्रिय हिंदू धर्म और समाज, प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. घुर्ये, जी.एस., 1953 भारतीय साधु। लोकप्रिय प्रकाशन।
8. गुप्ता, डी.एन., 1972, विश्वकर्मा वास्तु शास्त्र : हिंदू वास्तुकला का एक विश्वकोष। भारतीय कला प्रकाशन।
9. क्रैमिश, एस., 1976, हिंदू मंदिर, मोतीलाल बनारसीदास।
10. वात्स्यायन, के, (सं.), कलाकार और संरक्षक : भारतीय कला इतिहास में योगदान, मनोहर पब्लिशर्स।